भारतीय वाङ्मय –वैज्ञानिक व तकनीकी श्रेष्ठता

उपेन्द्र नन्दन शुक्ल
पूर्व रीडर, रसायन विज्ञान विभाग
बी0 एस0 एन0 वी0 पी0 जी0 कॉलेज, लखनऊ–226001, उ0प्र0, भारत
पताः 280/15, दुर्गापुरी, ब्लन्ट स्क्वायर, लखनऊ–226004, उ0प्र0, भारत

सार

भारतीय वाङ्मय में स्पष्ट उल्लेख उपलब्ध हैं जो सिद्ध करते हैं कि वैदिक युग से ही भारत वर्ष में जड़ी बूटियों पर किये गये शोध के उपरांत उन्हें मात्र आयुर्वेद चिकित्सा में ही नहीं अपितु दैनिक जीवन में भी भोजन का आवश्यक अंग बनाया गया। "रामायण" एवं "महाभारत" में वर्णित युद्ध प्रमाणित करते हैं कि भारत, नाभिकीय ऊर्जा तथा प्रक्षेपास्त्रों के प्रक्षेपण में निष्णात था। पौराणिक काल विभाजन का विस्तृत वर्णन मनीषियों की नितान्त सूक्ष्म तथा वैज्ञानिक दृष्टि का परिचायक है।

बीज शब्द– भारतीय वाङ्मय, आयुर्वेद चिकित्सा, नाभिकीय ऊर्जा, प्रकृति, पुराण।

Indian Vangmaya-scientific and technological excellence

Upendra Nandan Shukla
Former Reader, Department of Chemistry
B.S.N.V. Post Graduate College, Lucknow-226001, U.P., India
Address: 280/15, Durgapuri, Blunt Square, Lucknow-226004, U.P., India

Abstract

In Indian 'Vangmaya'(Composite Literature), Scholars have clearly mentioned that herbal vegetation was not only used in Ayurvedic medicines but in day to day Indian food as well after vigorous research. The description of wars available in epics of 'Ramayan' and 'Mahabharat' prove that India was a nuclear power and was technically very much advanced in Missile technology. 'Purans' provide the detailed description of the finest division of time which proves the scientific approach and advancement of ancient Indian scholars.

Key words- Indian 'Vangmaya', Ayurvedic Medicines, Nuclear Energy, Nature, Purans.

1. प्रस्तावना

जब कभी विज्ञान, वैज्ञानिक या तकनीकी युग की बात आती है तो विज्ञान क्या है ? यह जानने की एक सहज उत्कण्ठा अवश्य जागृत होती है। विभिन्न विद्वानों ने विज्ञान को विविध रूपों में परिभाषित किया है। एक सामान्य प्रचलित अवधारणा है कि किसी भी विषय के विषय ज्ञान को विज्ञान कहा जाता है किन्तु मैं इससे भिन्न अपना स्वयं का मत रखता हूँ। "प्रकृति के रहस्यों को उद्घाटित कर उनकी व्याख्या कर लेना ही विज्ञान होता है।" बात भू–गर्भ की हो, अन्तरिक्ष की हो, वनस्पति की हो, प्राणियों की हो, भौतिकी की हो

अथवा रसायन या किसी अन्य विषय की हो वस्तुतः प्रकृति के किंचित रहस्यों को जान लेना ही हमने उपलब्धि अथवा शोध माना है। जैसे–जैसे हम प्रकृति के सूक्ष्म से सूक्ष्मतम रहस्यों को जानकर उनका मानव के भौतिक, शारीरिक या मानसिक क्षेत्र में उपयोग करते जाते हैं हम स्वयं को विकासोन्मुख, विकसित अथवा तकनीकी दृष्टि से उन्नतिशील मानने लगते हैं। प्रकृति में अन्तर्निहित अतुलनीय सामर्थ्य के कुछ अंश पाकर हम गौरवान्वित होने लगते हैं। भगवद्गीता में कर्मयोग का निरूपण करते समय श्रीकृष्णजी ने कहा है–

प्रकृतेः क्रियमाणानि गुणैः कर्माणि सर्वशः। अहंकारं विमूढात्मा कर्ताहमिति मन्यते।।[1](गीता–3/27)

अर्थात् प्रकृति सब कुछ स्वयं नियन्त्रित करती है किन्तु भौतिकवादी व्यक्ति अहंकारवश अपने को ही कर्ता मानता है।

यदा कदा मानव अतिक्रमणों से विक्षुब्ध हो प्रकृति अपनी अप्रतिम सामर्थ्य की कुछ कलाओं का प्रदर्शन कर मनुष्य को उसकी असमर्थता, उसकी पराधीनता का अनुभव करा देती है। मानव की आयुधी, एवं तकनीकी प्रगति पूर्णतः असहाय हो जाती है– सुनामी और उत्तराखण्ड में आयी प्राकृतिक आपदा इसके ज्वलंत उदाहरण हैं। प्रत्येक युग में मनुष्य प्रकृति के सारे रहस्य जानने के लिए लालायित रहा है और जब उसने अधिकाधिक रहस्य जानकर स्वयं सृष्टि कर्ता बनने की चेष्टा की है तो महाध्वन्श हुये हैं और पूरी की पूरी सभ्यता ही विलीन हो गई। पौराणिक इतिहास के पृष्ठ पलटें तो राम–रावण युद्ध (त्रेता युग), महाभारत युद्ध (द्वापर युग) आदि प्रमाण मिल जायेंगे।

2. वैज्ञानिक दृष्टि

भारतीय दर्शन आत्म चिन्तन व आत्म मन्थन को प्राथमिकता देता है। उसमें प्रदर्शन एवं प्रचार को हेय माना गया है। यहाँ स्वान्तः सुखाय को वरीयता प्राप्त है। यही कारण रहा कि वैज्ञानिक क्षेत्र में अर्जित उपलब्धियाँ प्रसार व प्रचार से वंचित होने के कारण मात्र भारत की सीमाओं में बंधी रह गईं। आयुर्वेद के प्रमुख ग्रन्थ सुश्रुत संहिता (ईसा पूर्व 1000 वर्ष–लैटिन अनुवादक हेसलर के अनुसार)[2] में परमाणु को निम्नवत् परिभाषित किया गया है–

जालान्तरगते भानौ यद् सूक्ष्मं दृश्यते रजः। तस्य त्रिंशत्तमो भागः परमाणुः सउच्चते।।(सुश्रुत संहिता)[2]

अर्थात्– झरोखे से आने वाले सूर्य के प्रकाश में दिखाई देने वाले सूक्ष्म रज(बालू) के कण के तीसवें भाग को परमाणु कहते हैं। यह कथन समीकरण के रूप में निम्नवत् लिखा जा सकता है–

परमाणु = झरोखे के प्रकाश में दिखने वाला सूक्ष्म रज कण/30

जॉन डाल्टन, जिन्होंने 1809 ई0 में परमाणु को परिभाषित कर ख्याति अर्जित की तथा आधुनिक युग के जनक कहे जा सकते हैं, से 2800 वर्ष पूर्व भारत में परमाणु को परिभाषित किया गया था। मनीषियों और चिन्तकों की राष्ट्रीय संगोष्ठियां होती थीं, वाद विवाद के उपरान्त निष्कर्ष निकाले जाते थे किन्तु उनका अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर प्रचार व प्रसार नहीं हो पाता था (सम्भवतः आवागमन की दुरूहताओं के कारण) अतः भारतीय शोध व उनके निष्कर्ष विश्व पटल पर न आ सके। वैदिक काल से प्रचलित भारतीय आयुर्वेद चिकित्सा पद्धति चरक व सुश्रुत (ईसा पूर्व 1000 वर्ष) के समय अपने चरमोत्कर्ष पर थी। वन्य औषधियों, कन्दों, मूलों, त्वक् आदि पर कितना परिश्रम और शोध किया गया होगा जब उनके गुणों के आधार पर चिकित्सा पद्धति में ही नहीं अपितु शरीर की रोधक क्षमता में वृद्धि हेतु इन वन्य उपलब्ध जड़ी बूटियों का प्रयोग दिन प्रतिदिन के भोजन में आरम्भ किया गया होगा। भोजन में प्रयुक्त होने वाले सभी मसाले (हल्दी, धनिया, जीरा, हींग, अदरख आदि) औषधीय गुणों से सम्पन्न हैं तभी तो अमेरिका जैसा समृद्धिशाली देश इन्हें पेटेन्ट कराने के कितने ही असफल प्रयास कर चुका है। आँवला, नीम, इमली, घुघवार इत्यादि की उपादेयता सर्वविदित है और अब तो कितनी ही एलोपैथिक दवाइयों में इनका प्रयोग हो रहा है। च्यवनप्राश जैसी कितनी ही काष्ठादिकों द्वारा निर्मित आयुर्वेदिक औषधियाँ विश्व बाजार में स्थान ले चुकी हैं। वन्य उपलब्ध जड़ी बूटियों के विषय में मनीषियों का निम्न कथन दृष्टव्य है–

अमन्त्रं अक्षरं नास्ति मूलं न औषधम्। अयोग्यः पुरूषः नास्ति योजकः तत्र दुर्लभः।।(शुक्रनीति)[3]

अर्थात्– वर्णमाला का कोई अक्षर ऐसा नहीं है जो मन्त्र न हो, कोई भी मूल ऐसी नहीं है जो औषधीय गुण न रखती हो तथा कोई भी पुरुष ऐसा नहीं जो पूर्णतः अयोग्य हो (जिसमें कोई न कोई गुण न हो) आवश्यकता मात्र एक कुशल संयोजक की है।

3. नाभिकीय ऊर्जा

भारतीय अध्यात्म का केन्द्र बिन्दु है कण–कण में ईश्वर के विद्यमान होने का दर्शन। वैदिक युग में सभ्यता के विकास क्रम में सम्भवतः परमाणु विस्फोट सदृश किसी घटना के उपरान्त ही इस सिद्धान्त का प्रतिपादन हुआ होगा। जब मनीषियों ने परमाणु में सन्निहित अकूत शक्ति का साक्षात्कार किया होगा। शस्त्रों की चर्चा की जाय तो राम–रावण युद्ध (त्रेता युग) तथा महाभारत युद्ध (द्वापर युग) में प्रक्षेपास्त्रों का प्रचुरता से प्रयोग हुआ है। तकनीक इतनी विकसित व सूक्ष्म थी कि उसमें सिद्धहस्तता प्राप्ति हेतु कठोरतम साधना करनी होती थी। प्रक्षेपास्त्र धारण करने के लिए अपनी स्वयं की पात्रता भी प्रमाणित करनी होती थी तभी वो शक्तिपूरित शस्त्र विद्या प्रदान की जाती थी। उस समय प्रक्षेपास्त्र को वापस लेने अथवा लक्ष्य परिवर्तन कर देने की भी क्षमता विकसित थी जिसका वर्णन उपरोक्त ग्रन्थों में प्राप्त होता है। त्रेतायुग में भगवान शंकर के जिस "अजगव" धनुष को सीता स्वयंवर के समय राम ने भंग किया था वह अप्रतिम नाभिकीय शक्ति का पुंज था जिसके नष्ट करने की कला श्री राम के अतिरिक्त किसी को भी नहीं थी यही कारण था कि देश देशान्तर के नरेश धनुष देखते ही तेजहीन हो जाते थे, अपने को असमर्थ पाते थे। महर्षि वाल्मीकि जी ने रामायण में धनुष भंग करने का वर्णन इस प्रकार किया है–

तस्यशब्दो महानासीन्निर्घात सम निःस्वनः। भूमि कम्पश्च सुमहान् पर्वतस्येवदीर्यतः।।
निपेतुश्च नराः सर्वे तेन शब्देन मोहिताः। वर्जयिता मुनिवरं राजानं तौ च राघवौ।।

(वाल्मीकि रामायण–67/18–19)[4]

अर्थात्– उस धनुष के टूटते समय उससे वज्रपात के समान बड़ा घनघोर शब्द हुआ। ऐसा प्रतीत हुआ मानों पर्वत फट पड़ा हो। उस समय पृथ्वी पर भूकम्प आ गया ।।18।। मुनिवर विश्वामित्र, राजा जनक तथा दोनों भाई राम और लक्ष्मण को छोड़कर शेष जितने भी लोग वहाँ खड़े थे, वे सब धनुष टूटने के उस भयंकर शब्द को सुनकर मूर्छित होकर गिर पड़े।

रामचरित मानस में भी तुलसी दास जी ने इसी प्रकार का वर्णन निम्न शब्दों में किया है–

भरे भुवन घोर कठोर रव रवि बाजि तजि मारग चले।
चिक्करहिं दिग्गज डोल महि अहि कोल कूरुम कलमले।।(रामचरित मानस बा0का0/261)[5]

उक्त वर्णन स्पष्ट करते हैं कि वह साधारण धनुष न होकर एक नाभिकीय यंत्र था जिसको नष्ट करने की विधि राम जैसे धीर वीर युग पुरूष के अतिरिक्त किसी को नहीं आती थी।

4. पौराणिक काल गणना विज्ञान

भारतीय वाङ्मय में पुराणों का अतिशय महत्व है वेदों में जो ज्ञान सूत्र रूप में स्थित है, पुराणों ने उसी ज्ञान को स्पष्ट, व्याख्यायित तथा विस्तृत किया है। काल तो सर्वथा अविभाज्य सूक्ष्म तत्व है अमूर्त है तथापि व्यवहार की सिद्धि के लिए उसका विभाजन किया गया है। ज्योतिष शास्त्र तथा पुराणों में इस पर अत्याधिक विचार हुआ है। यहाँ पुराणों की गणना पर संक्षिप्त विचार प्रस्तुत किया जा रहा है।

एक सूर्योदय से दूसरे सूर्योदय तक के काल से मनुष्य के अहोरात्र को सूक्ष्मातिसूक्ष्म अंशों में विभाजित करने का क्रम बड़ा ही वैज्ञानिक है। श्रीमद्भागवत में बताया गया है–

अणुद्वौ परमाणुस्यात्त्रसरेणुस्त्रयः स्मृतः। जालार्क रश्म्यवगतः रवमेवानुपतन्नगात्।।
त्रसरेणुत्रिकं भुङ्ते यः कालः स त्रुटिः स्मृतः। शतभागस्तु वेधः स्यात्तैस्त्रिभिस्तु लवः स्मृतः।।
निमेषस्त्रिलवो ज्ञेय आग्नातस्ते त्रयः क्षणः।।(श्रीमद्भागवत–3/11/5–7)[6]

अर्थात्– दो परमाणु संयुक्त होकर एक "अणु" होता है और तीन अणुओं के मिलने से एक "त्रसरेणु" बनता है, जिसे झरोखे में से होकर आयी हुई सूर्य की किरणों के प्रकाश के माध्यम से आकाश में उड़ते हुए देखा जा सकता है। ऐसे तीन त्रसरेणुओं को पार करने में सूर्य की किरणों को जितना समय लगता है उसे "त्रुटि" कहते हैं। इससे सौ गुना काल "वेध" कहलाता है तथा तीन "वेध" का एक "लव" होता है। तीन "लव" को एक "निमेष" और तीन "निमेष" को एक "क्षण" कहते हैं।

उपर्युक्त काल विभाजन को निम्न समीकरणों के माध्यम से व्यक्त किया जा सकता है–

1 त्रुटि	=	3 त्रसरेणुओं को पार करने में सूर्य किरणों द्वारा लिया गया समय।
100 त्रुटि	=	1 वेध
3 वेध	=	1 लव
3 लव	=	1 निमेष
3 निमेष	=	1 क्षण

निमेश के आगे का काल विभाजन श्री विष्णु पुराण में निम्नवत् किया गया है–

निमेषो मानुषो योऽसौ मात्रा मात्रा प्रमाणतः। तैःपंचादशभिः काष्ठा त्रिंशत्काष्ठा कला स्मृता।।
नाडिका तु प्रमाणेन सा कला दश पंच च। नाडिकाभ्यामथ द्वाभ्यां मुहूर्तो द्विजसत्तम।
अहोरात्रं मुहूर्तास्तु त्रिंशन्मासो दिनैस्तथा।। (श्रीविष्णुपुराण–6/3/6–7,9)[7]

अर्थात्– मनुष्य का "निमेष" ही एक मात्रा वाले अक्षर उच्चारण–काल के समान परिमाण वाला होने से "मात्रा" कहा जाता है। पन्द्रह निमेषों की एक "काष्ठा" होती है और तीस "काष्ठा" की एक कला कही जाती है। पन्द्रह "कला" की एक "नाडिका" तथा दो "नाडिकाओं" का एक "मुहुर्त" होता है। तीस "मुहुर्त" का एक दिन–रात होता है तथा तीस दिन–रात का एक मास होता है।

उपरोक्त कथ्य को निम्न प्रकार समीकरणबद्ध किया जा सकता है–

15 निमेष (मात्रा)	=	1 काष्ठा
30 काष्ठा	=	1 कला
15 कला	=	1 नाडिका
2 नाडिका (30 कला)	=	1 मुहूर्त
30 मुहूर्त	=	1 दिन–रात
30 दिन–रात	=	1 मास

5. निष्कर्ष

इसी क्रम को आगे बढ़ाने में श्रीहरिवंश पुराण का निम्न अंश दृष्टव्य है:

निमिषैः पंचदशाभिः काष्ठा त्रिंशत् तु ताः कला। त्रिंशत्कलो मुहूर्तस्तु त्रिंशता तैर्मनीषिणः।।

अहोरात्रमिति प्राहुश्चन्द्र सूर्यगतिं नृप। विशेषेण तु सर्वेषु अहोरात्रे च नित्यशः।।
अहोरात्राः पंचदश पक्ष इत्यभिशब्दितः। द्वौ पक्षौ तु स्मृतो मासो मासौ द्वावृतुरुच्यते।।
अब्दं द्व्ययनमुक्तं च अयनं त्वृतुभिस्त्रिभिः। दक्षिणं चोत्तरं चैव संख्या तत्त्व विशारदैः।।

(श्रीहरिवंश पु0 हरिवंश पर्व–8/3–6)[8]

अर्थात्– पन्द्रह "निमेषों" की एक काष्ठा होती है और तीस काष्ठाओं की एक "कला" होती है। तीस कलाओं का एक "मुहूर्त" होता है तथा बुद्धिमान पुरूष तीस "मुहूर्तों" को एक दिन–रात कहते हैं जिसका निर्धारण सूर्य–चन्द्रमा की गति द्वारा होता है। पन्द्रह दिन–रात (अहरोत्र) का एक "पक्ष" होता है तथा दो "पक्षों" का एक "मास" माना जाता है और दो "मासों" की एक "ऋतु" कहलाती है। तीन "ऋतुओं" का एक "अयन" होता है और दो "अयनों" का एक वर्ष। संख्या के तत्व को जानने वाले मनीषियों ने दोनों अयनों का नाम "दक्षिणायन" और "उत्तरायण" बताया है।

उक्त निष्कर्ष निम्न समीकरणों में व्यक्त किया जा सकता है–

15 निमेष	=	1 काष्ठा
30 काष्ठा	=	1 कला
30 कला	=	1 मुहूर्त
30 मुहूर्त	=	एक दिन–रात(1 अहोरात्र)
15 अहोरात्र	=	1 पक्ष
2 पक्ष	=	1 मास
2 मास	=	1 ऋतु
3 ऋतु	=	1 अयन
2 अयन	=	1 वर्ष

ऐसे 100 वर्षों को मनुष्य की आयु बताया गया है।

उपर्युक्त भारतीय वाङ्मय के संक्षिप्त अंश प्राचीन भारतीय ऋषियों–मनीषियों की वैज्ञानिक दृष्टि, चिन्तन एवं तकनीकी उत्कृष्टता तथा उनके द्वारा किये गये कठोर परिश्रम और कष्ट साध्य शोधों का परिचय अवश्य देते हैं।

संदर्भ

1. श्रीमद्भगवतगीता–3/27।
2. सुश्रुत संहिता हिन्दी विश्वकोष, खण्ड–1, मु0पृ0–383।
3. शुक्रनीति–2/127।
4. वाल्मीकि रामायण–67/18–19।
5. रामचरित मानस बा0 का0/261।
6. श्रीमद्भागवत–3/11/5–7।
7. श्रीविष्णु पुराण–6/3/6–7,9।
8. श्री हरिवंश पुराण हरिवंश पर्व–8/3–6।